मौर्य प्रशासन

[THE MAURYAN ADMINISTRATION]

भूमिका
(INTRODUCTION)

मौर्य काल में भारत ने पहली बार राजनीतिक एकता प्राप्त की तथा एक विशाल साम्राज्य पर मौर्य शासकों ने शासन किया। इस विशाल साम्राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था पर प्रकाश डालने वाले अनेक ऐतिहासिक स्रोत उपलब्ध हैं जिनसे ज्ञात होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य न केवल एक महान विजेता वरन् योग्य प्रशासक भी था। कौटिल्य का '**अर्थशास्त्र**', मैगस्थनीज की '**इण्डिका**', अशोक के '**शिलालेख**' व अनेक **यूनानी रचनाओं** से मौर्य शासन प्रणाली के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने गुरु, मित्र व प्रधानमन्त्री चाणक्य की सहायता से जिस शासन प्रणाली को आरम्भ किया। उल्लेखनीय है कि लगभग दो हजार वर्षों के उपरान्त अंग्रेजों ने भी लगभग उसी शासन प्रणाली को भारत में प्रतिस्थापित किया। इसी तथ्य से स्पष्ट है कि मौर्य शासन प्रणाली कितनी सक्षम व उत्तम रही होगी।

अध्ययन की सुविधा के लिए मौर्य प्रशासन को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है :

(1) केन्द्रीय प्रशासन (Central Administration),
(2) प्रान्तीय प्रशासन (Provincial Administration),
(3) न्याय प्रशासन (Judicial Administration),
(4) राजस्व प्रशासन (Revenue Administration),
(5) गुप्तचर व्यवस्था (Espionage System),
(6) सैन्य प्रशासन (Military Administration),
(7) लोकहित के कार्य (Public Welfare Works),
(8) अशोक द्वारा किये गये सुधार (Reforms made by Ashoka)।

1. केन्द्रीय प्रशासन
(CENTRAL ADMINISTRATION)

केन्द्रीय प्रशासन के निम्नलिखित भाग थे :

(अ) राजा—मौर्य साम्राज्य का स्वरूप राजतन्त्रात्मक (Monarchy) था, अतः शासन का प्रधान 'राजा' होता था। राजतन्त्रात्मक शासन प्रणाली में राजा का योग्य होना अत्यन्त आवश्यक है। इसी कारण चाणक्य ने इस बात को अत्यधिक महत्व दिया है। अर्थशास्त्र में उसने लिखा है, "**राजा का जो शील होता है वही प्रजा का भी होता है। यदि राजा परिश्रमी और उन्नतिशील हो तो प्रजा भी उन्नतिशील हो जाती है, राजा दुर्व्यसनी हो तो प्रजा भी वैसी ही हो जाती है।**" अतः चाणक्य ने राजा में निम्नलिखित गुणों का होना परम आवश्यक बताया है—'**वह (राजा) ऊँचे कुल का हो, उसमें दैवीय बुद्धि व शक्ति हो, वह वृद्ध-जनों की बात सुनने वाला हो, धार्मिक व साम्यवादी हो, परस्पर विरोधी बातें न करने वाला हो (सुलझे विचारों का हो), उसका लक्ष्य ऊँचा हो, अत्यधिक उत्साही हो, सामन्तों को वश में रखने में सक्षम हो, दृढ़ बुद्धि वाला हो, उसकी परिषद छोटी न हो तथा विनयानुगामी हो।**' इनके अतिरिक्त राजा के लिए '**इन्द्रियों पर विजय**' चाणक्य ने आवश्यक बतायी है। काम, क्रोध, लोभ, मान, मद व हर्ष पर विजय प्राप्त करना राजा के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

मौर्य काल में सिद्धान्त के रूप में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति राजा के हाथों में ही केन्द्रित थी, किन्तु व्यवहार में अनेक प्रतिबन्धों के कारण ऐसा नहीं था। राजा की शक्ति व निरंकुशता सीमित थी। विशाल मन्त्रिपरिषद व प्राचीन परम्पराओं के पालन ने मौर्य शासकों की निरंकुशताओं पर सदैव अंकुश लगाये रखा।

राजा के प्रमुखतः तीन कर्तव्य थे—शासन सम्बन्धी, न्याय सम्बन्धी व सैनिक। **शासक की हैसियत** से वह राज्य के अधिकारियों की नियुक्ति करता, अर्थ विभाग के कागजों को देखता, विदेशी राजदूतों से विचार-विमर्श करता, अपने राजदूत अन्य देशों को भेजता, गुप्तचरों द्वारा राज्य के सम्बन्ध में विभिन्न विवरण सुनता, तथा प्रजा व राजकीय अधिकारियों को आदेश भेजता था। **न्यायाधीश के रूप में**, देश का सर्वोच्च अधिकारी होने के कारण अपनी सभा में नीचे के न्यायालयों में आये हुए मामलों के निर्णय देता था। प्रजा से सीधे आवेदन पत्र भी स्वीकार करता था। **सैनिक कर्तव्यों के पालन के लिए** वह युद्ध के समय स्वयं सेना का संचालन करता तथा शांति के समय सैन्य संगठन व साम्राज्य को सुरक्षा की व्यवस्था करता था।[1]

राजा की दिनचर्या कठोर होती थी तथा वह प्रजा के हित में रत रहता था। आवश्यक कार्यों को निपटाने के लिए राजा सदैव उद्यत रहता था तथा कार्यवश जो लोग मिलना चाहते थे, उनसे मिलता था क्योंकि राजा के दुष्प्राप्य होने से विद्रोह होने का डर रहता है। राजा सुरक्षा हेतु कभी भी एक ही कमरे में नहीं सोता था। राजा की सभी वैयक्तिक सेवाएँ सेविकाएँ व दासियाँ करती थीं। राजा को कोई भोजन में विष न दे दे, तथा अन्तःपुर में विद्रोह न हो, इसके लिए पूर्ण सतर्कता रखी जाती थी।

हिन्दू शासन पद्धति के अनुसार राजा विधि का रक्षक है उसका निर्माता नहीं, किन्तु 'अर्थशास्त्र' से ज्ञात होता है कि मौर्य शासकों को कानून बनाने का अधिकार था। **इस प्रकार यद्यपि मौर्य शासकों में सम्पूर्ण शक्ति निहित थी, किन्तु उन्होंने निरंकुशतापूर्वक शासन नहीं किया और न ही वे स्वेच्छाचारी थे।**

(ब) मन्त्रिपरिषद्—मौर्य साम्राज्य अत्यन्त विशाल था। अतः अकेले राजा के लिए इतने विस्तृत साम्राज्य के प्रशासन को सुचारु रूप से चलाना सम्भव न था, अतः राजा की सहायता के लिए एक मन्त्रिपरिषद होती थी। अर्थशास्त्र में चाणक्य ने लिखा है, "**राज्यरूपी रथ एक पहिये (राजा) के द्वारा नहीं चल सकता, अतएव दूसरे पहिये के रूप में उसे मन्त्रिपरिषद की आवश्यकता होती है।**"[2] इस मन्त्रिपरिषद के सदस्यों को राजा ही नियुक्त करेगा, जो उच्च-कुल में उत्पन्न हुए हों, वीर, बुद्धिमान, ईमानदार व स्वामिभक्त हों।[3] चाणक्य ने पुनः लिखा है कि मन्त्रियों की नियुक्ति पूर्णतः योग्यता पर ही आधारित होनी चाहिए, कुल अथवा किसी अन्य प्रभाव से प्रेरित नहीं।[4] इस मन्त्रिपरिषद में साधारणतया 12 से 20 तक मन्त्री होते थे, पर चाणक्य का इस विषय में विचार था कि मन्त्रिपरिषद में कितने मन्त्री हों, यह निश्चित करना आवश्यक नहीं है। जितनी सामर्थ्य हो, जैसी आवश्यकता हो, उसके अनुसार मन्त्रियों को नियुक्त किया जाना चाहिए। मन्त्रिपरिषद के सदस्यों का वेतन बारह हजार पण प्रति वर्ष होता था। मन्त्रिपरिषद का मुख्य कार्य राजा को परामर्श देना होता था, किन्तु उस परामर्श को स्वीकार करने के लिए राजा बाध्य न था, यद्यपि प्रायः राजा मन्त्रिपरिषद के परामर्श के अनुकूल ही कार्य करता था। मन्त्रिपरिषद की कार्रवाई को गुप्त रखा जाता था। **'अर्थशास्त्र' से ही ज्ञात होता है कि मन्त्रिपरिषद निम्नलिखित मामलों में राजा को परामर्श देती थी :**

(i) विपत्ति काल में।
(ii) राज्य द्वारा प्रारम्भ किये जाने वाले कार्यों को प्रारम्भ करने सम्बन्धी उपायों के विषय में।
(iii) ऐसे कार्यों में व्यय होने वाले धन व कार्यकर्ताओं की संख्या का निर्धारण।
(iv) राज्यकार्यों के सम्पादन हेतु स्थान व समय निर्धारण।
(v) समस्त कार्यों को पूर्ण करने के लिए साधन जुटाना।

मन्त्रिपरिषद के अतिरिक्त एक अन्य छोटी उप-समिति भी होती थी, जिसमें साधारणतया तीन अथवा चार मन्त्री होते थे। इसे 'मन्त्रिगण' कहा जाता था। ऐसे विषयों में जिसमें तुरन्त निर्णय लेना हो राजा 'मन्त्रिणः' से विचार-विमर्श करता था तथा बाद में मन्त्रिपरिषद की बैठक को आमन्त्रित करता था।

मन्त्रिपरिषद की बैठक जिस भवन में होती थी उसे '**मन्त्र-भूमि**' कहते थे।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि मौर्य काल में मन्त्रिपरिषद का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान था तथा मन्त्रिपरिषद व मन्त्रिणः नामक संस्थाएँ मात्र औपचारिक न होकर अत्यधिक क्रियाशील होती थीं।

(स) विभागीय व्यवस्था—मन्त्रिपरिषद व राजा के द्वारा तो मुख्यतया नीति निर्धारण का कार्य किया जाता था तत्पश्चात् उन नीतियों को कार्यान्वित करने का प्रमुख कार्य नौकरशाही (bureaucracy) के द्वारा किया जाता था। **मौर्यकालीन नौकरशाही अत्यधिक सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित थी तथा विशाल साम्राज्य के प्रशासनिक कार्यों को सुगमतापूर्वक करती थी।**[1] मौर्यकाल में प्रशासन की सुविधा के लिए अठारह विभागों की स्थापना की गयी थी जिन्हें '**तीर्थ**' कहते थे। प्रत्येक विभाग के संचालन व निरीक्षण के लिए एक अध्यक्ष होता था जिसे 'आमात्य' कहा जाता था। आमात्य अपने विभाग का सर्वोच्च अधिकारी होता था। प्रत्येक विभाग के अनेक उप-विभाग होते थे जिनके अध्यक्ष आमात्य के अधीन ही कार्य करते थे। अर्थशास्त्र में जिन अठारह आमात्यों का वर्णन मिलता है, उनमें प्रमुख हैं:—मन्त्री एवं पुरोहित, समाहर्ता, सन्निधाता, सेनापति इत्यादि।

2. प्रान्तीय शासन
(PROVINCIAL ADMINISTRATION)

मौर्य साम्राज्य अत्यन्त विशाल था, अतः सम्पूर्ण देश का प्रशासन सीधे पाटलिपुत्र से संचालित करना सम्भव न था। अतः प्रशासनिक सुविधा को ध्यान में रखते हुए मौर्य शासकों ने अपने साम्राज्य को 6 प्रान्तों में विभक्त किया था। **इन प्रान्तों को 'चक्र' कहा जाता था।** इन चक्रों पर शासन करने के लिए साधारणतः राजवंशीय व्यक्तियों को ही नियुक्त किया जाता था, जिन्हें 'कुमार' कहा जाता था। ये कुमार अपने अधीन महामात्यों की सहायता से 'चक्र' में शासन करते थे। सम्राट का इन चक्रों पर पूर्ण नियन्त्रण रहता था। डॉ. स्मिथ ने इस विषय में लिखा है, "**ऐसा प्रतीत होता है कि दूरस्थ प्रान्तों व अधीनस्थ कर्मचारियों पर मौर्यकालीन केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण अकबर के समय से भी अधिक सशक्त था।**"[2] मौर्यकालीन विभिन्न चक्र निम्न थे :

(i) **गृह-राज्य**—मगध व निकटवर्ती प्रदेश, जिसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। इस प्रान्त में सम्राट स्वयं ही शासन करता था।

(ii) **उत्तरापथ**—इसमें पंजाब, कश्मीर, गान्धार, सिन्ध आदि प्रदेश थे। इनकी राजधानी तक्षशिला थी।

(iii) **अवन्ती**—काठियावाड़, गुजरात, मालवा व राजपूताना इस चक्र में आते थे। इनकी राजधानी उज्जैन थी।

(iv) **कलिंग**—इसकी राजधानी तोषाली थी।

(v) **दक्षिणापथ**—विन्ध्याचल के दक्षिण का समस्त प्रदेश जिसकी राजधानी सुवर्णगिरी थी।

प्रत्येक प्रान्त अनेक मण्डलों में विभक्त होता था जिनमें महामात्य शासन करते थे। प्रत्येक मण्डल पुनः विभिन्न जनपदों में विभक्त होता था जिसका प्रधान अधिकारी समाहर्ता होता था। प्रत्येक जनपद प्रशासन की सुविधा के लिए, पुनः अनेक नगरों में विभक्त होता था। प्रत्येक जनपद की सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई ग्राम होती थी। 10 ग्रामों के समूह को संग्रहण, 200 ग्रामों के समूह को खार्वटिक, 400 ग्रामों के समूह को द्रोणमुख व 800 ग्रामों के समूह को स्थानीय कहते थे।

1. "While the policy was formulated by the ... of

(अ) ग्राम प्रशासन—प्रशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जिसका अधिकारी ग्रामिक कहलाता था। ग्रामिक ग्राम सभा का भी प्रधान होता था तथा उसका निर्वाचन गाँववासियों के द्वारा ही किया जाता था। गाँव एक प्रकार से छोटे-छोटे अर्द्ध स्वतन्त्र प्रजातन्त्र थे।

गाँव के प्रशासनिक कार्य ग्रामिक अन्य व्यक्तियों की सहायता से करता था। वह अपराधियों को दण्ड देता व सार्वजनिक कार्यों को सम्पन्न करता था। नये गाँव बसाने अथवा संकटकाल में राजा ग्रामिकों को कर से मुक्त कर देता था।

ग्रामवासियों और सरकार के ग्राम अध्यक्षों के कार्यों व चरित्र की देख-रेख के लिए गुप्तचर नियुक्त थे।

(ब) नगर प्रशासन—मौर्यकालीन नगर प्रशासन अत्यन्त सुव्यवस्थित एवं उच्चकोटि का था। नगर का प्रधान अधिकारी 'नागरिक' होता था जिसके अधीन स्थानिक व गोप आदि अधिकारी होते थे। **कौटिल्य व मैगस्थनीज ने नगर प्रशासन का विस्तृत विवरण दिया है जिससे पता चलता है कि प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए विभिन्न नियम बने हुए थे जिनका पालन करना जनता के लिए अनिवार्य था।** गृह निर्माण, सफाई व्यवस्था, अग्नि को फैलने से रोकने, मदिरालयों, आदि सभी के लिए नियम थे। उदाहरण के लिए, यदि किसी घर में आग लगे और पड़ोसी उसके बुझाने में सहायता न दे तो वह दण्ड का भागी होता था। इसी प्रकार इधर-उधर गन्दगी फैलाना भी दण्डनीय अपराध था। नगरों में जल व्यवस्था, सड़कों की स्थिति, भूमिगत मार्गों की सही स्थिति आदि का नागरिक पूरा ध्यान रखता था।

मैगस्थनीज के अनुसार पाटलिपुत्र के नगर प्रशासन के लिए 30 सदस्यों की एक नगर सभा होती थी जो पाँच-पाँच सदस्यों की छः समितियों में बँटी होती थी। कार्य प्रत्येक समिति अलग-अलग करती है। इसके अतिरिक्त सामूहिक रूप से इन समितियों का कार्य सार्वजनिक भवनों की मरम्मत, मूल्यों का नियन्त्रण तथा बाजारों, बन्दरगाहों व देवालयों की देख-रेख करना था।

मैगस्थनीज द्वारा वर्णित पाटलिपुत्र की इस प्रशासनिक-व्यवस्था के समान ही अन्य नगरों की भी व्यवस्था रही होगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मौर्यकाल में नगर का प्रशासन अत्यन्त सुव्यवस्थित था।

3. न्याय प्रशासन
(THE JUDICIAL ADMINISTRATION)

मौर्यकाल में न्याय व्यवस्था अत्यन्त सुव्यवस्थित एवं उच्चकोटि की थी। न्याय के लिए अनेक न्यायालय होते थे। सबसे ऊपर राजा का न्यायालय होता था, जिसका निर्णय अन्तिम एवं सर्वमान्य होता था। न्याय प्रशासन के अन्तर्गत सबसे छोटा न्यायालय ग्राम का होता था जिसमें **'ग्रामिक'** ग्राम सभा की सहायता से निर्णय देता था। ग्राम न्यायालय के ऊपर संग्रहण, द्रोणमुख, स्थानीय व जनपद के न्यायालय होते थे। जनपद न्यायालय के ऊपर पाटलिपुत्र स्थित केन्द्रीय न्यायालय होते थे जिसके ऊपर राजा का न्यायालय होता था। राजा नीचे के न्यायालयों के निर्णयों को रद्द कर सकता था।

ग्राम एवं राजा के न्यायालय के अतिरिक्त अन्य सभी कार्यालय दो प्रकार के होते थे : धर्मस्थीय व कंटकशोधन न्यायालय :

(i) **धर्मस्थीय न्यायालय**—यह एक प्रकार से दीवानी अदालत होती थी जिसमें तीन **'धर्मस्थ'** (व्यावहारिक) होते थे जिन्हें धर्मशास्त्र का पूर्ण ज्ञान होता था। **धर्मस्थ के अतिरिक्त तीन 'आमात्य' भी होते थे।** धर्मस्थीय न्यायालय में विवाह एवं मोक्ष, दायभाग (उत्तराधिकार), वास्तु (गृह सम्बन्धी मामले), वास्तु विक्रय, खेत, ऋण, सिंचाई का पानी, चरागाह, सड़कों, पथों, धरोहर, क्रय-विक्रय, मानहानि, हिंसा आदि मामलों का निर्णय होता है।

(ii) **कंटकशोधन न्यायालय**—यह मुख्यतया फौजदारी के मामलों का निर्णय करता था। इस न्यायालय के अध्यक्ष प्रदेष्टा कहलाते थे जिनकी संख्या तीन होती थी। कृषि, व्यापार और उद्योगों के लिए अनेक नियम बने थे। यह प्रबन्ध करना आवश्यक था कि उक्त नये नियमों का सुचारु रूप से पालन हो तथा ऐसा न हो कि उनके द्वारा अपकारी कर्मचारी प्रजा पर अत्याचार करने लगें। अतः एक ऐसे तन्त्र की आवश्यकता थी जो उपर्युक्त कार्यों को प्रोत्साहन दे और इन पर आवश्यक लगान व बन्धन लगा सके। इन न्यायालयों की स्थापना इसी उद्देश्य से की गयी थी।

दण्ड व्यवस्था—मैगस्थनीज और यूनानी लेखकों के विवरणों से ज्ञात होता है कि मौर्यकाल में दण्ड व्यवस्था अत्यधिक कठोर थी। साधारण अपराध के लिए कठोर दण्ड दिया जाता था। **चाणक्य ने लिखा है कि अपराधी को दण्ड उसके अपराध के अनुरूप मिलना चाहिए न तो अधिक और न ही कम।** अर्थशास्त्र से ज्ञात होता है कि छोटे अपराधों के लिए आर्थिक दण्ड ही देते थे। गम्भीर अपराधों के लिए अंग-भंग व मृत्युदण्ड की व्यवस्था थी, किन्तु उन्हें भी अर्थदण्ड में परिणत किया जा सकता था। यथा—अपराध तथा दण्ड व्यवस्था के परिणामस्वरूप ही मौर्य काल में अपराध बहुत कम होते थे। मैगस्थनीज ने भी लिखा है कि भारत में चोरी बहुत कम होती थी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मौर्यकालीन न्याय व्यवस्था उच्चकोटि की एवं सुव्यवस्थित थी तथा राजा की शक्ति को सुदृढ़ करने और देश में शान्ति बनाये रखने में सफल हुई।

4. राजस्व प्रशासन
(THE REVENUE ADMINISTRATION)

राजस्व प्रशासन, प्रशासन का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग था। कौटिल्य ने स्वयं कहा है कि सम्पूर्ण कार्य 'कोष' पर निर्भर करते हैं, अतः राजा को सबसे अधिक कोष बढ़ाने पर ध्यान देना चाहिए। अर्थशास्त्र में न्याय के अनेक साधनों का वर्णन किया गया है।

मौर्यकाल में राज्य की आय का प्रमुख स्रोत भूमि कर था। जो भूमि राज्य की अपनी होती थी उससे होने वाली आय को 'सीता' कहा जाता था तथा जो भूमि राज्य के अधिकार में नहीं थी उससे होने वाली आय को 'भाग' कहते थे। **मौर्य काल में आयात व निर्यात कर** (Import and Export duty) **भी लिया जाता था। आयात कर को 'प्रवेश्य' व निर्यात कर को 'निष्क्राम्य' कहा जाता था।**

इसके अतिरिक्त न्यायालयों से भी अर्थदण्ड के द्वारा राज्य की आय होती थी। अर्थाभाव में राजा राजकोष को भरने के लिए अतिरिक्त कर भी लगा सकता था।

राजस्व विभाग का सर्वोच्च अधिकारी समाहर्त्ता होता था, जिसके अधीन शुल्काध्यक्ष, सूत्राध्यक्ष, मुद्राध्यक्ष आदि अनेक कर्मचारी कार्य करते थे। गबन करने वाले व्यक्ति के लिए प्राणदण्ड देने का नियम था।

अत्यन्त विशाल होने के कारण मौर्य साम्राज्य का व्यय भी अत्यधिक था। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आय नियमित बजट के अनुसार खर्च की जाती थी। व्यय के शीर्षों (Heads) में प्रमुख राजपरिवार, धार्मिक-कृत्य, सेना, रक्षा, वेतन, भत्ता, शिक्षा, वृत्ति, यातायात, दान, सिंचाई, भवन निर्माण व अन्य लोकोपकारी कार्य थे।[1]

5. आरक्षा एवं गुप्तचर व्यवस्था
(POLICE AND THE ESPIONAGE SYSTEM)

राज्य में शान्ति एवं सुरक्षा को बनाये रखने के उद्देश्य से आरक्षा एवं गुप्तचर विभाग की स्थापना की गयी थी। अपराधी को पकड़ना व राजकीय नियमों का पालन करवाना आरक्षा कर्मचारियों का प्रमुख कार्य था। मौर्यकाल में आरक्षा कर्मचारी को रक्षित (रक्षा करने वाला) कहा जाता था।

विद्रोह एवं अपराधों का पता लगाने के लिए शक्तिशाली गुप्तचर विभाग था। गुप्तचरों को मौर्यकाल में 'चर' कहा जाता था, किन्तु यूनानी लेखकों ने उन्हें **'ओवरसियर'** व **'इन्सपेक्टर'** कहा है। **गुप्तचर स्त्री व पुरुष दोनों ही होते थे।** स्त्री गुप्तचरों में दासी, भिक्षुणी, शिल्पकारी व वेश्याएँ होती थीं। पुरुष गुप्तचर छद्मभेष धारण कर अपराधों का पता लगाते थे। इन गुप्तचरों का राज्य कर्मचारियों के कार्य के विषय में जानकारी रखना, आन्तरिक या बाह्य शत्रुओं के विषय में उनकी शक्ति का पता लगाना तथा छोटी-से-छोटी सूचना राजा को देना इनका कार्य था। गुप्तचरों के कार्यों पर दृष्टि रखने के लिए भी गुप्तचर होते थे। **इस प्रकार गुप्तचर व्यवस्था दोहरी** (Double Espionage System) **थी।** इसी से स्पष्ट है कि गुप्तचरों का कार्य कितने उत्तरदायित्व का

1 पाण्डेय, राजबलि, **पूर्वोक्त**, पृ. 167.

व महत्वपूर्ण होता था। **स्मिथ ने मौर्यकालीन गुप्तचर व्यवस्था की प्रशंसा करते हुए उसकी तुलना आधुनिक जर्मनी की गुप्तचर व्यवस्था से की है।**[1]

6. सैन्य प्रशासन
(MILITARY ADMINISTRATION)

चन्द्रगुप्त का समय सैनिक युग था, अतः उसने एक अत्यन्त शक्तिशाली एवं सुसंगठित सेना को तैयार किया था। चन्द्रगुप्त ने शक्तिशाली नन्दराजा को परास्त कर राज्य प्राप्त किया था तथा बाद में सैल्यूकस पर विजय प्राप्त की थी, जिससे उनकी सैन्य शक्ति का स्वतः ही अनुमान लगाया जा सकता है। यह विभाग पाँच-पाँच सदस्यों के छह मण्डलों में विभक्त था जो कि निम्नलिखित थे—(1) पैदल सेना, (2) नौसेना, (3) अश्व सेना, (4) रथ सेना, (5) गज सेना, (6) सैनिक सेवा (यातायात एवं युद्ध की आवश्यक सामग्रियों का विभाग)।

मौर्य सेना विभिन्न हथियारों से सुसज्जित थी। तलवार, भाले, धनुष, बाण, कटार आदि शस्त्रों का बहुतायत से प्रयोग किया जाता था। इसके अतिरिक्त कुछ स्थिर शस्त्र भी होते थे। **सर्वतोभद्र नामक एक ऐसा ही यन्त्र था जिससे शत्रु सेना पर पत्थरों की वर्षा की जाती थी।** इसके अतिरिक्त बहुमुख, अर्द्धबाहु, ऊर्ध्वबाहु, जामदग्य आदि इसी प्रकार के यन्त्र थे जिनका युद्ध में प्रयोग किया जाता था।

दुर्गों (forts) का भी मौर्यकाल में बहुत महत्व था। दुर्ग पाँच प्रकार के होते थे—(1) स्थल दुर्ग, (2) जल दुर्ग, (3) वन दुर्ग, (4) गिरि दुर्ग, तथा (5) मरु दुर्ग। अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण के लिए अनेक कारखाने थे।

सेना का सर्वोच्च अधिकारी सेनापति होता था। मैगस्थनीज ने लिखा है कि राज्य की ओर से सैनिकों को अनेक सुविधाएँ उपलब्ध थीं। सैनिकों को नियमित रूप से वेतन मिलता था। घायल सैनिकों के इलाज के लिए वैद्य सदैव साथ रहते थे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मौर्यकालीन सैन्य व्यवस्था अत्यन्त सुव्यवस्थित थी। स्मिथ ने मौर्य सेना को अकबर की सेना से भी अधिक शक्तिशाली बताया है, जो कि दुर्बल पुर्तगाली सेना से पराजित हो गयी। जबकि मौर्य सेना ने सैल्यूकस की शक्तिशाली सेना पर विजय प्राप्त की थी। स्मिथ ने लिखा है, "**इस प्रकार की किसी अन्य संस्था का कहीं वर्णन नहीं मिलता तथा इतनी सक्षम सेना को बनाने का श्रेय पूर्णतः चन्द्रगुप्त तथा उसके आसाधारण योग्य मन्त्री चाणक्य को ही है।**"[2]

7. लोकोपकारी कार्य
(PUBLIC WELFARE WORKS)

मौर्य शासकों ने जनता की सुख-सुविधाओं का अधिक से अधिक ध्यान रखने का प्रयास किया था इसी उद्देश्य से उन्होंने लोकोपकारी कार्य किये।

भारत मौर्य काल में भी एक कृषि प्रधान देश था। अतः भूमि की उर्वरक शक्ति व उपज को बढ़ाने के लिए मौर्य शासकों ने सिंचाई के उचित प्रबन्ध किये। इस विषय में मैगस्थनीज ने लिखा है, "**कृषि योग्य भूमि का विशाल भाग जल से सींचा जाता है। उसके लिए सिंचाई का समुचित प्रबन्ध है।**"

मौर्य सरकार ने यातायात की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया था। साम्राज्य के विभिन्न भागों को थल मार्ग द्वारा जोड़ा गया था। सड़कों के किनारे यात्रियों की सुविधा के लिए वृक्ष लगाये गये थे तथा प्याऊ की व्यवस्था थी। अनेक स्थानों पर धर्मशालाओं का भी निर्माण कराया था।

स्थान-स्थान पर औषधालयों की भी स्थापना की गयी थी, ताकि प्रजा स्वस्थ रह सके। औषधि उपलब्ध कराने का कार्य भी सरकार ही करती थी। महामारी को फैलने से रोकने के लिए सफाई की उचित व्यवस्था की गयी थी।

इसके अतिरिक्त शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार समय-समय पर शिक्षकों एवं विद्यालयों को अनुदान देती थी।

आकस्मिक संकटों का सामना करने के लिए भी सरकार उचित प्रबन्ध करती थी। अग्नि, महामारी, अकाल एवं बाढ़ आदि से सुरक्षा के लिए सरकार अग्नि रोकने वाले यन्त्रों, सफाई व उपचार, बाँध आदि का प्रबन्ध करती थी। बाल, वृद्ध, रोगी, विपत्तिग्रस्त व अनाथों का पोषण सरकार द्वारा किया जाता था।

8. अशोक द्वारा किये गये सुधार
(REFORMS MADE BY ASHOKA)

अशोक ने शासक बनने के पश्चात् उसी प्रशासनिक प्रणाली का पालन किया जो उसके पितामह चन्द्रगुप्त के काल में थी, किन्तु उसने समयानुकूल कुछ सुधार करके मौर्य शासन को और भी गठित कर दिया। **अशोक द्वारा किये गये प्रशासनिक सुधार निम्नलिखित हैं :**

अशोक ने अपने पड़ोसी राज्यों व आटविक जातियों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया। इसके साथ ही उसने मन्त्रियों को कोई भी निर्णय लेने के लिए पूर्ण स्वतन्त्र कर दिया था। इसी उद्देश्य से वह मन्त्रिपरिषद की बैठक में भी भाग नहीं लेता था ताकि मन्त्रिपरिषद स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय ले सके। यहाँ तक कि जब मन्त्रिपरिषद ने यह निर्णय लिया कि अशोक बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु राजकीय धन खर्च न करे तो अशोक ने इस निर्णय को भी स्वीकार कर लिया।

अशोक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य धर्म-महामात्रों की नियुक्ति करना था। अशोक ने अपने V शिलालेख में धर्म-महामात्रों की नियुक्ति व उसके कर्तव्यों के विषय में लिखा है, **"आज से पूर्व निकट अतीत में कभी धर्म-महामात्र नहीं रहे। अपने राज्याभिषेक के तेरह वर्ष पश्चात् मैंने उनकी नियुक्ति की। उनका कार्य धर्म की स्थापना, धर्म की घोषणा व धर्मावलम्बियों की सुरक्षा करना व उनके सुख के लिए प्रयत्न करना है।"** धर्म-महामात्रों का कार्य प्रजा में शुद्ध नैतिक जीवन का प्रचार करना तथा उनका नैतिक एवं भौतिक स्तर ऊँचा करना था। इसके अतिरिक्त धर्म-महामात्रों के प्रमुख कार्य दान-वितरण, अन्याय व अत्याचार का निराकरण तथा ऐसे कार्य करना था जिनसे प्रजा में धर्म की वृद्धि हो।

विभिन्न विभागों के अधिकारियों राजुक, प्रादेशिक, व्यावहारिक आदि को भी अशोक ने आदेश दिये थे कि अपने कार्यों के अतिरिक्त वे प्रजा की नैतिक एवं धार्मिक उन्नति के लिए भी प्रयत्न करें तथा प्रति पाँचवें वर्ष राज्य का दौरा कर जनता के कष्टों का निराकरण करें। **इसी उद्देश्य से अशोक ने न्याय-सम्बन्धी समस्त अधिकार राजुकों को दे दिये थे, ताकि न्याय शीघ्र हो सके।** अशोक से पूर्व न्याय के अधिकार प्रादेशिक, व्यावहारिक आदि अन्य अधिकारियों में विभक्त थे, जिससे प्रजा को कष्ट था।

अशोक ने राज्य का स्थायी रूप से दौरा करने के लिए व्युष्ट नामक अधिकारी नियुक्त किये, ताकि वे जनता की समस्याओं से परिचित हो सकें। इसके अतिरिक्त अशोक ने इस बात की घोषणा की थी कि वह चाहे जिस स्थिति अथवा जहाँ हो उसको प्रजा के विषय में उसी जगह व स्थिति में सूचनाएँ मिलती रहनी चाहिए।

अशोक ने न केवल मनुष्यों बल्कि पशुओं के लिए भी चिकित्सालय बनवाये तथा पशु-पक्षियों के वध पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

अशोक ने प्रजा के हित के लिए सड़कों के किनारे छायादार वृक्ष लगवाये, कुएँ खुदवाये व अनेक धर्मशालाएँ बनवायीं। इसी प्रकार विहार यात्रा के स्थान पर धर्म-यात्रा का प्रजा से आह्वान किया।

अशोक ने बन्दियों की स्थिति में भी सुधार किया था। अशोक ने वर्ष में एक बार कैदियों को मुक्त करने की प्रथा आरम्भ की। **सम्भवतः यह अशोक के जन्मदिन अथवा राज्याभिषेक के वार्षिकोत्सव के दिन किया जाता होगा।** मृत्युदण्ड प्राप्त कैदियों को भी मृत्युदण्ड देने से पूर्व तीन दिन का अवकाश दिया जाता था, ताकि वे अपने सम्बन्धियों से मिल सकें, अपने आश्रितों की व्यवस्था कर सकें, दान-पुण्य व ईश्वर को याद कर सकें। इसके अतिरिक्त दण्ड व्यवस्था को भी सरल कर दिया गया था।

इस प्रकार अशोक ने अपने शासनकाल में महत्वपूर्ण सुधार किये।

निष्कर्ष
(CONCLUSION)

मौर्य साम्राज्य अत्यन्त विस्तृत था, किन्तु फिर भी चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने मन्त्री चाणक्य की सहायता से अत्यन्त सक्षम, सुनियोजित एवं सुसंगठित शासन प्रणाली की स्थापना की थी। इस प्रणाली में कुछ अन्य सुधार कर अशोक ने इसे और भी व्यावहारिक रूप प्रदान किया। स्मिथ ने मौर्य शासन प्रणाली की प्रशंसा करते हुए लिखा है; **"मौर्य शासन प्रणाली विस्तृत रूप से नियोजित की गयी थी जिसमें अनेक विभाग तथा अधिकारी थे, जिनके कार्य पूर्णतः स्पष्ट कर दिये गये थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रशासन अकबर के शासनकाल में मुगल साम्राज्य के प्रशासन से कहीं अधिक संगठित था।"**[1]